12095CH02

विषय दो

राजा, किसान और नगर
आरंभिक राज्य और अर्थव्यवस्थाएँ
(लगभग 600 ई.पू. से 600 ई.)

हड़प्पा सभ्यता के बाद डेढ़ हज़ार वर्षों के लंबे अंतराल में उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में कई प्रकार के विकास हुए। यही वह काल था जब सिंधु नदी और इसकी उपनदियों के किनारे रहने वाले लोगों द्वारा *ऋग्वेद* का लेखन किया गया। उत्तर भारत, दक्कन पठार क्षेत्र और कर्नाटक जैसे उपमहाद्वीप के कई क्षेत्रों में कृषक बस्तियाँ अस्तित्व में आईं। साथ ही दक्कन और दक्षिण भारत के क्षेत्रों में चरवाहा बस्तियों के प्रमाण भी मिलते हैं। ईसा पूर्व पहली सहस्राब्दि के दौरान मध्य और दक्षिण भारत में शवों के अंतिम संस्कार के नए तरीके भी सामने आए, जिनमें महापाषाण के नाम से ख्यात पत्थरों के बड़े-बड़े ढाँचे मिले हैं। कई स्थानों पर पाया गया है कि शवों के साथ विभिन्न प्रकार के लोहे से बने उपकरण और हथियारों को भी दफ़नाया गया था।

चित्र 2.1
एक अभिलेख, साँची (मध्य प्रदेश), लगभग द्वितीय शताब्दी ई.पू.

ईसा पूर्व छठी शताब्दी से नए परिवर्तनों के प्रमाण मिलते हैं। शायद इनमें सबसे ज़्यादा मुखर आरंभिक राज्यों, साम्राज्यों और रजवाड़ों का विकास है। इन राजनीतिक प्रक्रियाओं के पीछे कुछ अन्य परिवर्तन थे। इनका पता कृषि उपज को संगठित करने के तरीके से चलता है। इसी के साथ-साथ लगभग पूरे उपमहाद्वीप में नए नगरों का उदय हुआ।

इतिहासकार इस प्रकार के विकास का आकलन करने के लिए अभिलेखों, ग्रंथों, सिक्कों तथा चित्रों जैसे विभिन्न प्रकार के स्रोतों का अध्ययन करते हैं। जैसा कि हम आगे पढ़ेंगे, यह एक जटिल प्रक्रिया है, और आपको यह भी आभास होगा कि इन स्रोतों से विकास की पूरी कहानी नहीं मिल पाती है।

1. प्रिंसेप और पियदस्सी

भारतीय अभिलेख विज्ञान में एक उल्लेखनीय प्रगति 1830 के दशक में हुई, जब ईस्ट इंडिया कंपनी के एक अधिकारी जेम्स प्रिंसेप ने ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियों का अर्थ निकाला। इन लिपियों का उपयोग सबसे आरंभिक अभिलेखों और सिक्कों में किया गया है। प्रिंसेप को पता चला कि अधिकांश अभिलेखों और सिक्कों पर पियदस्सी, यानी मनोहर मुखाकृति वाले राजा का नाम लिखा है। कुछ अभिलेखों पर राजा का

अभिलेखों के अध्ययन को अभिलेखशास्त्र कहते हैं।

नाम असोक भी लिखा है। बौद्ध ग्रंथों के अनुसार असोक सर्वाधिक प्रसिद्ध शासकों में से एक था।

इस शोध से आरंभिक भारत के राजनीतिक इतिहास के अध्ययन को नयी दिशा मिली, क्योंकि भारतीय और यूरोपीय विद्वानों ने उपमहाद्वीप पर शासन करने वाले प्रमुख राजवंशों की वंशावलियों की पुनर्रचना के लिए विभिन्न भाषाओं में लिखे अभिलेखों और ग्रंथों का उपयोग किया। परिणामस्वरूप बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों तक उपमहाद्वीप के राजनीतिक इतिहास का एक सामान्य चित्र तैयार हो गया।

उसके बाद विद्वानों ने अपना ध्यान राजनीतिक इतिहास के *संदर्भ* की ओर लगाया और यह छानबीन करने की कोशिश की कि क्या राजनीतिक परिवर्तनों और आर्थिक तथा सामाजिक विकासों के बीच कोई संबंध था। शीघ्र ही यह आभास हो गया कि इनमें संबंध तो थे लेकिन संभवत: सीधे संबंध हमेशा नहीं थे।

2. प्रारंभिक राज्य

2.1 सोलह महाजनपद

आरंभिक भारतीय इतिहास में छठी शताब्दी ई.पू. को एक महत्वपूर्ण परिवर्तनकारी काल माना जाता है। इस काल को प्राय: आरंभिक राज्यों, नगरों, लोहे के बढ़ते प्रयोग और सिक्कों के विकास के साथ जोड़ा जाता है। इसी काल में बौद्ध तथा जैन सहित विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का विकास हुआ। बौद्ध और जैन धर्म (अध्याय 4) के आरंभिक ग्रंथों में महाजनपद नाम से सोलह राज्यों का उल्लेख मिलता है। यद्यपि महाजनपदों के नाम की सूची इन ग्रंथों में एकसमान नहीं है लेकिन वज्जि, मगध, कोशल, कुरु, पांचाल, गांधार और अवन्ति जैसे नाम प्राय: मिलते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि उक्त महाजनपद सबसे महत्वपूर्ण महाजनपदों में गिने जाते होंगे।

अधिकांश महाजनपदों पर राजा का शासन होता था लेकिन *गण* और संघ के नाम से प्रसिद्ध राज्यों में कई लोगों का समूह शासन करता था, इस समूह का प्रत्येक व्यक्ति राजा कहलाता था। भगवान महावीर और भगवान बुद्ध (अध्याय 4) इन्हीं *गणों* से संबंधित थे। वज्जि संघ की ही भाँति कुछ राज्यों में भूमि सहित अनेक आर्थिक स्रोतों पर राजा गण सामूहिक नियंत्रण रखते थे। यद्यपि स्रोतों के अभाव में इन राज्यों के इतिहास पूरी तरह लिखे नहीं जा सकते लेकिन ऐसे कई राज्य लगभग एक हज़ार साल तक बने रहे।

प्रत्येक महाजनपद की एक राजधानी होती थी जिसे प्राय: किले से घेरा जाता था। किलेबंद राजधानियों के रख-रखाव और प्रारंभी सेनाओं

अभिलेख

अभिलेख उन्हें कहते हैं जो पत्थर, धातु या मिट्टी के बर्तन जैसी कठोर सतह पर खुदे होते हैं। अभिलेखों में उन लोगों की उपलब्धियाँ, क्रियाकलाप या विचार लिखे जाते हैं जो उन्हें बनवाते हैं। इनमें राजाओं के क्रियाकलाप तथा महिलाओं और पुरुषों द्वारा धार्मिक संस्थाओं को दिए गए दान का ब्योरा होता है। यानी अभिलेख एक प्रकार से स्थायी प्रमाण होते हैं। कई अभिलेखों में इनके निर्माण की तिथि भी खुदी होती है जिन पर तिथि नहीं मिलती है, उनका काल निर्धारण आमतौर पर *पुरालिपि* अथवा लेखन शैली के आधार पर काफ़ी सुस्पष्टता से किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, लगभग 250 ई.पू. में अक्षर 'अ' 𑀅 इस प्रकार लिखा जाता था और 500 ई. में यह 𑀅 इस प्रकार लिखा जाता था।

प्राचीनतम अभिलेख प्राकृत भाषाओं में लिखे जाते थे। प्राकृत उन भाषाओं को कहा जाता था जो जनसामान्य की भाषाएँ होती थीं। इस अध्याय में अजातसत्तु और असोक जैसे शासकों के नाम प्राकृत भाषा में लिखे गए हैं, क्योंकि यह नाम प्राकृत अभिलेखों से प्राप्त हुए हैं। आपको यहाँ तमिल, पालि और संस्कृत जैसी भाषाओं के शब्द भी मिलेंगे, क्योंकि इन भाषाओं में भी अभिलेख मिलते हैं। यह संभव है कि लोग अन्य भाषाएँ भी बोलते थे लेकिन इनका उपयोग लेखन कार्य में नहीं किया जाता था।

जनपद का अर्थ एक ऐसा भूखंड है जहाँ कोई *जन* (लोग, कुल या जनजाति) अपना पाँव रखता है अथवा बस जाता है। इस शब्द का प्रयोग प्राकृत व संस्कृत दोनों में मिलता है

➲ ऐसे कौन से क्षेत्र हैं जहाँ राज्य और नगर सर्वाधिक सघन रूप से बसे थे।

और नौकरशाही के लिए भारी आर्थिक स्रोत की आवश्यकता होती थी। लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व से संस्कृत में ब्राह्मणों ने धर्मशास्त्र नामक ग्रंथों की रचना शुरू की। इनमें शासक सहित अन्य के लिए नियमों का निर्धारण किया गया और यह अपेक्षा की जाती थी कि शासक क्षत्रिय वर्ण से ही होंगे (अध्याय 3 भी देखिए)। शासकों का काम किसानों, व्यापारियों और शिल्पकारों से कर तथा भेंट वसूलना माना जाता था। क्या वनवासियों और चरवाहों से भी कर रूप में कुछ लिया जाता था? हमें इतना तो ज्ञात है कि संपत्ति जुटाने का एक वैध उपाय पड़ोसी राज्यों पर आक्रमण करके धन इकट्ठा करना भी माना जाता था। धीरे-धीरे कुछ राज्यों ने अपनी स्थायी सेनाएँ और नौकरशाही तंत्र तैयार कर लिए। बाकी राज्य अब भी सहायक-सेना पर निर्भर थे जिन्हें प्रायः कृषक वर्ग से नियुक्त किया जाता था।

ओलीगार्की या समूहशासन उसे कहते हैं जहाँ सत्ता पुरुषों के एक समूह के हाथ में होती है। आपने पिछले वर्ष जिस रोमन गणराज्य के बारे में पढ़ा, वह एक समूह शासन ही है। यद्यपि इसका नाम अलग है।

2.2 सोलह महाजनपदों में प्रथम : मगध

छठी से चौथी शताब्दी ई.पू. में मगध (आधुनिक बिहार) सबसे शक्तिशाली महाजनपद बन गया। आधुनिक इतिहासकार इसके कई कारण बताते हैं। एक यह कि मगध क्षेत्र में खेती की उपज खास तौर पर अच्छी होती थी। दूसरे यह कि लोहे की खदानें (आधुनिक झारखंड में) भी आसानी से उपलब्ध थीं जिससे उपकरण और हथियार बनाना सरल होता था। जंगली क्षेत्रों में हाथी उपलब्ध थे जो सेना के एक महत्वपूर्ण अंग थे। साथ ही गंगा और इसकी उपनदियों से आवागमन सस्ता व सुलभ होता था। लेकिन आरंभिक जैन और बौद्ध लेखकों ने मगध की महत्ता का कारण विभिन्न शासकों की नीतियों को बताया है। इन लेखकों के अनुसार बिंबिसार, अजातसत्तु और महापद्मनंद जैसे प्रसिद्ध राजा अत्यंत महत्त्वाकांक्षी शासक थे, और इनके मंत्री उनकी नीतियाँ लागू करते थे।

प्रारंभ में, राजगाह (आधुनिक बिहार के राजगीर का प्राकृत नाम) मगध की राजधानी थी। यह रोचक बात है कि इस शब्द का अर्थ है 'राजाओं का घर'। पहाड़ियों के बीच बसा राजगाह एक किलेबंद शहर था। बाद में चौथी शताब्दी ई.पू. में पाटलिपुत्र को राजधानी बनाया गया, जिसे अब पटना कहा जाता है जिसकी गंगा के रास्ते आवागमन के मार्ग पर महत्वपूर्ण अवस्थिति थी।

➲ **चर्चा कीजिए...**

मगध की सत्ता के विकास के लिए आरंभिक और आधुनिक लेखकों ने क्या-क्या व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं? ये एक-दूसरे से कैसे भिन्न हैं।

चित्र 2.2
राजगीर के किले की दीवार

➲ इन दीवारों का निर्माण क्यों किया गया?

भाषाएँ और लिपियाँ

असोक के अधिकांश अभिलेख प्राकृत में हैं जबकि पश्चिमोत्तर से मिले अभिलेख अरामेइक और यूनानी भाषा में हैं। प्राकृत के अधिकांश अभिलेख ब्राह्मी लिपि में लिखे गए थे जबकि पश्चिमोत्तर के कुछ अभिलेख खरोष्ठी में लिखे गए थे। अरामेइक और यूनानी लिपियों का प्रयोग अफ़ग़ानिस्तान में मिले अभिलेखों में किया गया था।
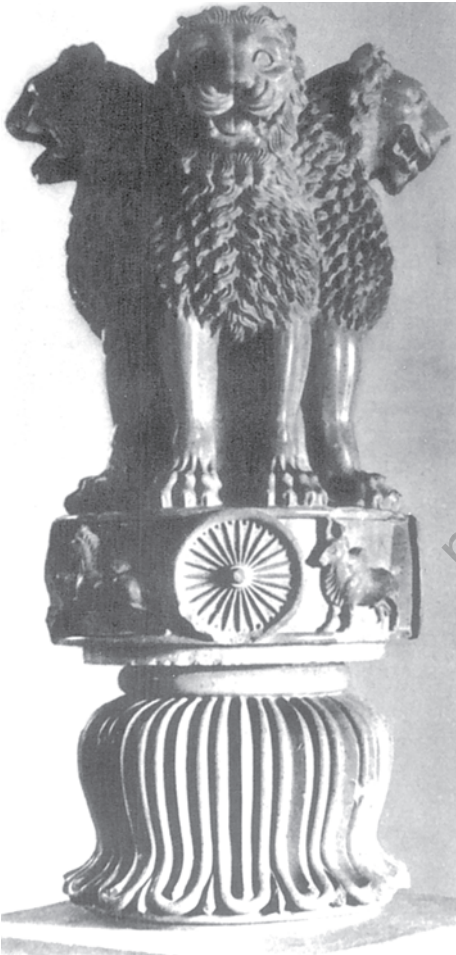
चित्र 2.3
सिंह शीर्ष

➲ सिंह शीर्ष को आज महत्वपूर्ण क्यों माना जाता है?

3. एक आरंभिक साम्राज्य

मगध के विकास के साथ-साथ मौर्य साम्राज्य का उदय हुआ। मौर्य साम्राज्य के संस्थापक चंद्रगुप्त मौर्य (लगभग 321 ई.पू.) का शासन पश्चिमोत्तर में अफ़गानिस्तान और बलूचिस्तान तक फैला था। उनके पौत्र असोक ने जिन्हें आरंभिक भारत का सर्वप्रसिद्ध शासक माना जा सकता है, कलिंग (आधुनिक उड़ीसा) पर विजय प्राप्त की।

3.1 मौर्यवंश के बारे में जानकारी प्राप्त करना

मौर्य साम्राज्य के इतिहास की रचना के लिए इतिहासकारों ने विभिन्न प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया है। इनमें पुरातात्विक प्रमाण भी शामिल हैं, विशेषतया मूर्तिकला। मौर्यकालीन इतिहास के पुनर्निर्माण हेतु समकालीन रचनाएँ भी मूल्यवान सिद्ध हुई हैं, जैसे चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आए यूनानी राजदूत मेगस्थनीज़ द्वारा लिखा गया विवरण। आज इसके कुछ अंश ही उपलब्ध हैं। एक और स्रोत जिसका उपयोग प्रायः किया जाता है, वह है *अर्थशास्त्र*। संभवतः इसके कुछ भागों की रचना कौटिल्य या चाणक्य ने की थी जो चंद्रगुप्त के मंत्री थे। साथ ही मौर्य शासकों का उल्लेख परवर्ती जैन, बौद्ध और पौराणिक ग्रंथों तथा संस्कृत वाङ्मय में भी मिलता है। यद्यपि उक्त साक्ष्य बड़े उपयोगी हैं लेकिन पत्थरों और स्तंभों पर मिले असोक के अभिलेख प्रायः सबसे मूल्यवान स्रोत माने जाते हैं।

असोक वह पहला सम्राट था जिसने अपने अधिकारियों और प्रजा के लिए संदेश प्राकृतिक पत्थरों और पॉलिश किए हुए स्तंभों पर लिखवाए थे। असोक ने अपने अभिलेखों के माध्यम से *धम्म* का प्रचार किया। इनमें बड़ों के प्रति आदर, संन्यासियों और ब्राह्मणों के प्रति उदारता, सेवकों और दासों के साथ उदार व्यवहार तथा दूसरे के धर्मों और परंपराओं का आदर शामिल हैं।

3.2 साम्राज्य का प्रशासन

मौर्य साम्राज्य के पाँच प्रमुख राजनीतिक केंद्र थे, राजधानी पाटलिपुत्र और चार प्रांतीय केंद्र–तक्षशिला, उज्जयिनी, तोसलि और सुवर्णगिरि। इन सबका उल्लेख असोक के अभिलेखों में किया गया है। यदि हम इन अभिलेखों का परीक्षण करें तो पता चलता है कि आधुनिक पाकिस्तान के पश्चिमोत्तर सीमांत प्रांत से लेकर आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और उत्तराखंड तक हर स्थान पर एक जैसे संदेश उत्कीर्ण किए गए थे। क्या इतने विशाल साम्राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था समान रही होगी? इतिहासकार अब इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि ऐसा संभव नहीं था। साम्राज्य में

शामिल क्षेत्र बड़े विविध और भिन्न-भिन्न प्रकार के थे : कहीं अफ़गानिस्तान के पहाड़ी क्षेत्र और कहीं उड़ीसा के तटवर्ती क्षेत्र। यह संभव है कि सबसे प्रबल प्रशासनिक नियंत्रण साम्राज्य की राजधानी तथा उसके आसपास के प्रांतीय केंद्रों पर रहा हो। इन केंद्रों का चयन बड़े ध्यान से किया गया। तक्षशिला और उज्जयिनी दोनों लंबी दूरी वाले महत्वपूर्ण व्यापार मार्ग पर स्थित थे जबकि सुवर्णगिरि (अर्थात् सोने के पहाड़) कर्नाटक में सोने की खदान के लिए उपयोगी था।
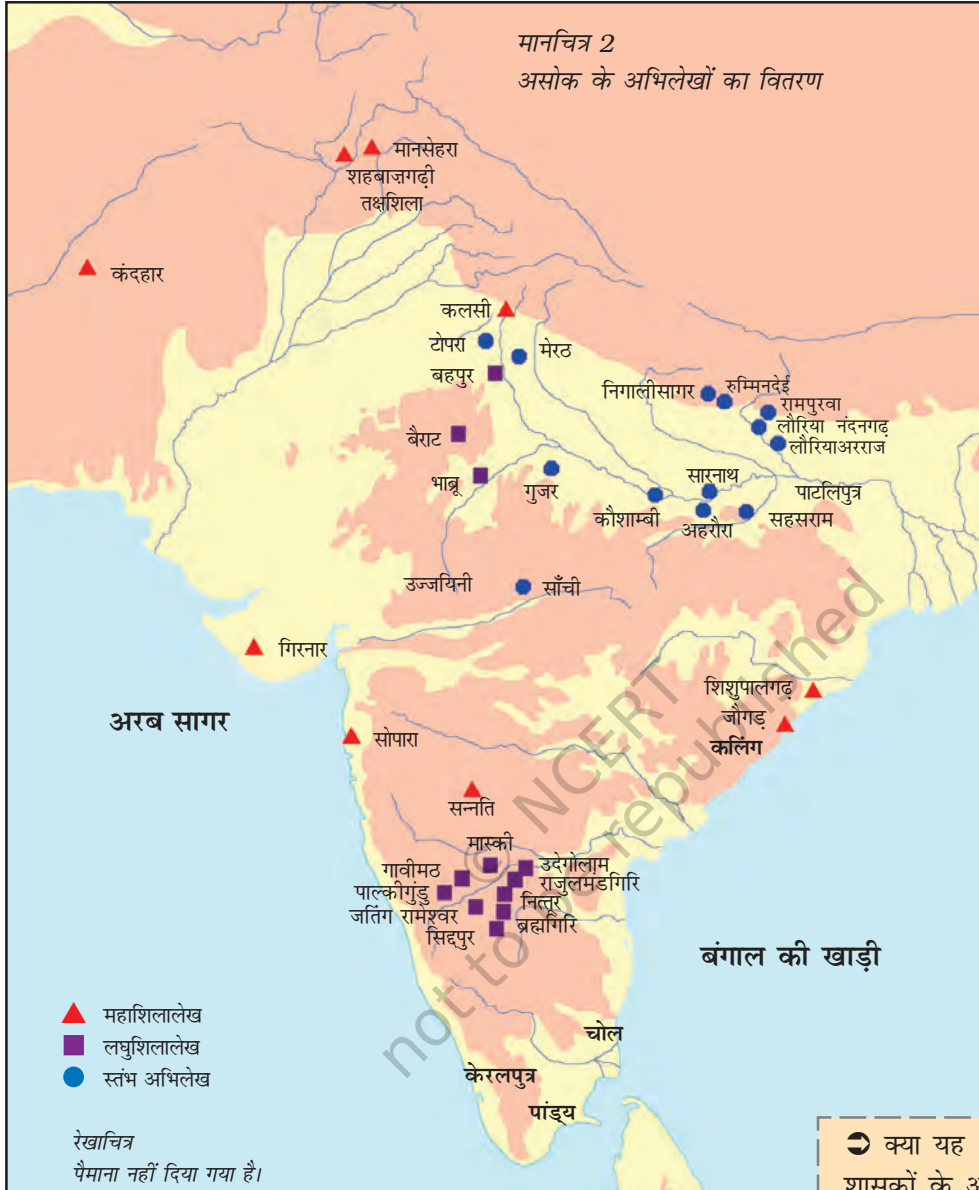
➲ क्या यह भी संभव है कि जो क्षेत्र शासकों के अधीन नहीं थे वहाँ भी उन्होंने अभिलेख उत्कीर्ण करवाए होंगे?

स्रोत 1

सम्राट के अधिकारी क्या-क्या कार्य करते थे?

मेगस्थनीज़ के विवरण का एक अंश दिया गया है। साम्राज्य के महान अधिकारियों में से कुछ नदियों की देख-रेख और भूमि मापन का काम करते हैं जैसा कि मिस्र में होता था। कुछ प्रमुख नहरों से उपनहरों के लिए छोड़े जाने वाले पानी के मुखद्वार का निरीक्षण करते हैं ताकि हर स्थान पर पानी की समान पूर्ति हो सके। यही अधिकारी शिकारियों का संचालन करते हैं और शिकारियों के कृत्यों के आधार पर उन्हें इनाम या दंड देते हैं। वे कर वसूली करते हैं और भूमि से जुड़े सभी व्यवसायों का निरीक्षण करते हैं साथ ही लकड़हारों, बढ़ई, लोहारों और खननकर्ताओं का भी निरीक्षण करते हैं।

➲ विभिन्न व्यावसायिक समूहों के निरीक्षण के लिए इन अधिकारियों को क्यों नियुक्त किया जाता था?

साम्राज्य के संचालन के लिए भूमि और नदियों दोनों मार्गों से आवागमन बना रहना अत्यंत आवश्यक था। राजधानी से प्रांतों तक जाने में कई सप्ताह या महीनों का समय लगता होगा। इसका अर्थ यह है कि यात्रियों के लिए खान-पान की व्यवस्था और उनकी सुरक्षा भी करनी पड़ती होगी। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सेना सुरक्षा का एक प्रमुख माध्यम रही होगी। मेगस्थनीज़ ने सैनिक गतिविधियों के संचालन के लिए एक समिति और छः उपसमितियों का उल्लेख किया है। इनमें से एक का काम नौसेना का संचालन करना था, तो दूसरी यातायात और खान-पान का संचालन करती थी, तीसरी का काम पैदल सैनिकों का संचालन, चौथी का अश्वारोहियों, पाँचवीं का रथारोहियों तथा छठी का काम हाथियों का संचालन करना था। दूसरी उपसमिति का दायित्व विभिन्न प्रकार का था : उपकरणों के ढोने के लिए बैलगाड़ियों की व्यवस्था, सैनिकों के लिए भोजन और जानवरों के लिए चारे की व्यवस्था करना तथा सैनिकों की देखभाल के लिए सेवकों और शिल्पकारों की नियुक्ति करना।

असोक ने अपने साम्राज्य को अखंड बनाए रखने का प्रयास किया। ऐसा उन्होंने *धम्म* के प्रचार द्वारा भी किया। जैसा कि हमने अभी ऊपर पढ़ा, *धम्म* के सिद्धांत बहुत ही साधारण और सार्वभौमिक थे। असोक के अनुसार *धम्म* के माध्यम से लोगों का जीवन इस संसार में और इसके बाद के संसार में अच्छा रहेगा। *धम्म* के प्रचार के लिए *धम्म महामात* नाम से विशेष अधिकारियों की नियुक्ति की गई।

3.3 मौर्य साम्राज्य कितना महत्वपूर्ण था?

उन्नीसवीं सदी में जब इतिहासकारों ने भारत के आरंभिक इतिहास की रचना करनी शुरू की तो मौर्य साम्राज्य को इतिहास का एक प्रमुख काल माना गया। इस समय भारत ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन एक औपनिवेशिक देश था। उन्नीसवीं और आरंभिक बीसवीं सदी के भारतीय इतिहासकारों को प्राचीन भारत में एक ऐसे साम्राज्य की संभावना बहुत चुनौतीपूर्ण तथा उत्साहवर्धक लगी। साथ ही प्रस्तर मूर्तियों सहित मौर्यकालीन सभी पुरातत्व एक अद्भुत कला के प्रमाण थे जो साम्राज्य की पहचान माने जाते हैं। इतिहासकारों को लगा कि अभिलेखों पर लिखे संदेश अन्य शासकों के अभिलेखों से भिन्न हैं। इसमें उन्हें यह लगा कि अन्य राजाओं की अपेक्षा असोक एक बहुत शक्तिशाली और परिश्रमी शासक थे। साथ ही वे बाद के उन राजाओं की अपेक्षा विनीत भी थे जो अपने नाम के साथ बड़ी-बड़ी उपाधियाँ जोड़ते थे। इसलिए इसमें कोई आश्चर्यजनक बात नहीं थी कि बीसवीं सदी के राष्ट्रवादी नेताओं ने भी असोक को प्रेरणा का स्रोत माना।

➲ **चर्चा कीजिए...**

मेगस्थनीज़ और *अर्थशास्त्र* से उद्धृत अंशों को पुनः पढ़िए। मौर्य शासन के इतिहास लेखन में ये ग्रंथ कितने उपयोगी हैं?

फिर भी, मौर्य साम्राज्य कितना महत्वपूर्ण था? यह साम्राज्य मात्र डेढ़ सौ साल तक ही चल पाया जिसे उपमहाद्वीप के इस लंबे इतिहास में बहुत बड़ा काल नहीं माना जा सकता। इसके अतिरिक्त यदि आप मानचित्र 2 को देखें तो पता चलेगा कि मौर्य साम्राज्य उपमहाद्वीप के सभी क्षेत्रों में नहीं फैल पाया था। यहाँ तक कि साम्राज्य की सीमा के अंतर्गत भी नियंत्रण एकसमान नहीं था। दूसरी शताब्दी ई.पू. आते-आते उपमहाद्वीप के कई भागों में नए-नए शासक और रजवाड़े स्थापित होने लगे।

4. राजधर्म के नवीन सिद्धांत

4.1 दक्षिण के राजा और सरदार

उपमहाद्वीप के दक्कन और उससे दक्षिण के क्षेत्र में स्थित तमिलकम (अर्थात् तमिलनाडु एवं आंध्र प्रदेश और केरल के कुछ हिस्से) में चोल, चेर और पाण्ड्य जैसी सरदारियों का उदय हुआ। ये राज्य बहुत ही समृद्ध और स्थायी सिद्ध हुए।

सरदार और सरदारी

सरदार एक शक्तिशाली व्यक्ति होता है जिसका पद वंशानुगत भी हो सकता है और नहीं भी। उसके समर्थक उसके खानदान के लोग होते हैं। सरदार के कार्यों में विशेष अनुष्ठान का संचालन, युद्ध के समय नेतृत्व करना और विवादों को सुलझाने में मध्यस्थता की भूमिका निभाना शामिल है। वह अपने अधीन लोगों से भेंट लेता है (जबकि राजा कर वसूली करते हैं), और अपने समर्थकों में उस भेंट का वितरण करता है। सरदारी में सामान्यतया कोई स्थायी सेना या अधिकारी नहीं होते हैं।

हमें इन राज्यों के बारे में विभिन्न प्रकार के स्रोतों से जानकारी मिलती है। उदाहरण के तौर पर, प्राचीन तमिल संगम ग्रंथों में ऐसी कविताएँ हैं जो सरदारों का विवरण देती हैं कि उन्होंने अपने स्रोतों का संकलन और वितरण किस प्रकार से किया।

कई सरदार और राजा लंबी दूरी के व्यापार द्वारा राजस्व जुटाते थे। इनमें मध्य और पश्चिम भारत के क्षेत्रों पर शासन करने वाले सातवाहन (लगभग द्वितीय शताब्दी ई.पू. से द्वितीय शताब्दी ई. तक) और उपमहाद्वीप के पश्चिमोत्तर और पश्चिम में शासन करने वाले मध्य एशियाई मूल के शक शासक शामिल थे। उनके सामाजिक उद्गम के बारे में अधिक जानकारी तो नहीं है, लेकिन जैसा कि हम सातवाहन शासकों के बारे में अध्याय तीन में पढ़ेंगे कि एक बार सत्ता में आने के बाद उन्होंने ऊँचे सामाजिक अस्तित्व का दावा कई प्रकार से किया।

स्रोत 2

सेना के लिए हाथी पकड़ना

अर्थशास्त्र में सैनिक और प्रशासनिक संगठन के बारे में विस्तृत विवरण मिलते हैं। मिसाल के तौर पर हाथी को पकड़ने के उपाय के बारे में उसमें यह लिखा है:

> हाथी वनों के संरक्षक हाथियों को पालने वाले लोगों, हाथी के पैरों में जंज़ीर बाँधने वाले लोगों, सीमारक्षकों, वनवासियों और महावतों के साथ मिलकर पाँच से सात हथिनियों की मदद से, जंगली हाथियों द्वारा गिराए गए मलमूत्र को पहचानते हुए उन्हें पकड़ने का काम करते थे।

यूनानी स्रोतों के अनुसार, मौर्य सम्राट के पास छः लाख पैदल सैनिक, तीस हज़ार घुड़सवार तथा नौ हज़ार हाथी थे। कुछ इतिहासकार इस विवरण को अतिशयोक्तिपूर्ण मानते हैं।

➲ यदि यूनानी विवरण सही है, तो बताइए कि इतनी बड़ी सेना के भरण-पोषण के लिए मौर्य शासकों को किस तरह के संसाधनों की ज़रूरत पड़ती होगी?

स्रोत 3

पाण्ड्य सरदार सेनगुत्तुवन की वनयात्रा

यह तमिल महाकाव्य *सिलप्पादिकारम्* का एक अंश है :

जब वह वन की यात्रा पर थे तो लोग नाचते-गाते हुए पहाड़ों से उतरे ठीक उसी तरह जैसे पराजित लोग विजयी का आदर करते हैं। वे अपने साथ उपहार लाए, जिनमें हाथी दाँत, सुगंधित लकड़ी, हिरणों के बाल से बने चँवर, मधु, चंदन, गेरू, सुरमा, हल्दी, इलायची, मिर्च आदि वस्तुएँ थीं। वे अपने साथ नारियल, आम, जड़ी-बूटी, फल, प्याज, गन्ना, फूल, सुपारी, केला, बाघों के बच्चे, शेर, हाथी, बंदर, भालू, हिरण, कस्तूरी मृग, लोमड़ी, मोर, जंगली मुर्गे, बोलने वाले तोते आदि भी लाए।

➲ लोग यह उपहार क्यों लाए? सरदार इन उपहारों का उपयोग किसलिए करते होंगे?

4.2 दैविक राजा

राजाओं के लिए उच्च स्थिति प्राप्त करने का एक साधन विभिन्न देवी-देवताओं के साथ जुड़ना था। मध्य एशिया से लेकर पश्चिमोत्तर भारत तक शासन करने वाले कुषाण शासकों ने (लगभग प्रथम शताब्दी ई.पू. से प्रथम शताब्दी ई. तक) इस उपाय का सबसे अच्छा उद्धरण प्रस्तुत किया। कुषाण इतिहास की रचना अभिलेखों और साहित्य परंपरा के माध्यम से की गई है। जिस प्रकार के राजधर्म को कुषाण शासकों ने प्रस्तुत करने की इच्छा की उसका सर्वोत्तम प्रमाण उनके सिक्कों और मूर्तियों से प्राप्त होता है।

उत्तर प्रदेश में मथुरा के पास माट के एक देवस्थान पर कुषाण शासकों की विशालकाय मूर्तियाँ लगाई गई थीं। अफ़गानिस्तान के एक देवस्थान पर भी इसी प्रकार की मूर्तियाँ मिली हैं। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि इन मूर्तियों के ज़रिए कुषाण स्वयं को देवतुल्य प्रस्तुत करना चाहते थे। कई कुषाण शासकों ने अपने नाम के आगे 'देवपुत्र' की उपाधि भी लगाई थी। संभवतः वे उन चीनी शासकों से प्रेरित हुए होंगे, जो स्वयं को स्वर्गपुत्र कहते थे।

चौथी शताब्दी ई. में गुप्त साम्राज्य सहित कई बड़े साम्राज्यों के साक्ष्य मिलते हैं। इनमें से कई साम्राज्य सामंतों पर निर्भर थे। अपना निर्वाह स्थानीय संसाधनों द्वारा करते थे जिसमें भूमि पर नियंत्रण भी शामिल था। वे शासकों का आदर करते थे और उनकी सैनिक सहायता भी करते थे। जो सामंत शक्तिशाली होते थे वे राजा भी बन जाते थे और जो राजा दुर्बल होते थे, वे बड़े शासकों के अधीन हो जाते थे।

गुप्त शासकों का इतिहास साहित्य, सिक्कों और अभिलेखों की सहायता से लिखा गया है। साथ ही कवियों द्वारा अपने राजा या स्वामी की प्रशंसा में लिखी प्रशस्तियाँ भी उपयोगी रही हैं। यद्यपि इतिहासकार इन रचनाओं के आधार पर ऐतिहासिक तथ्य निकालने का प्रायः प्रयास

चित्र 2.4
एक कुषाण सिक्का
अग्र भाग - कनिष्क
पृष्ठ भाग - देवता

➲ राजा को किस प्रकार दर्शाया गया है?

करते हैं लेकिन उनके रचयिता तथ्यात्मक विवरण की अपेक्षा उन्हें काव्यात्मक ग्रंथ मानते थे। उदाहरण के तौर पर, इलाहाबाद स्तंभ अभिलेख के नाम से प्रसिद्ध *प्रयाग प्रशस्ति* की रचना हरिषेण जो स्वयं गुप्त सम्राटों के संभवत: सबसे शक्तिशाली सम्राट समुद्रगुप्त के राजकवि थे, ने संस्कृत में की थी।

स्रोत 4

समुद्रगुप्त की प्रशस्ति

यह *प्रयाग प्रशस्ति* का एक अंश है :

धरती पर उनका कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं था। अनेक गुणों और शुभकार्यों से संपन्न उन्होंने अपने पैर के तलवे से अन्य राजाओं के यश को मिटा दिया है। वे परमात्मा पुरुष हैं, साधु (भले) की समृद्धि और असाधु (बुरे) के विनाश के कारण हैं। वे अज्ञेय हैं। उनके कोमल हृदय को भक्ति और विनय से ही वश में किया जा सकता है। वे करुणा से भरे हुए हैं। वे अनेक सहस्र गायों के दाता हैं। उनके मस्तिष्क की दीक्षा दीन-दुखियों, विरहणियों और पीड़ितों के उद्धार के लिए की गई है। वे मानवता के लिए दिव्यमान उदारता की प्रतिमूर्ति हैं। वे देवताओं में कुबेर (धन-देव), वरुण (समुद्र-देव), इंद्र (वर्षा के देवता) और यम (मृत्यु-देव) के तुल्य हैं।

चित्र 2.5
बलुआ पत्थर से बनी कुषाण राजा की एक मूर्ति

➲ इस मूर्ति में ऐसी क्या विशेषताएँ हैं जिनसे यह प्रतीत होता है कि यह एक राजा की मूर्ति है?

➲ चर्चा कीजिए...

राजाओं ने दिव्य स्थिति का दावा क्यों किया?

स्रोत 5

गुजरात की सुदर्शन झील

मानचित्र 2 में गिरनार ढूँढ़िए। सुदर्शन झील एक कृत्रिम जलाशय था। हमें इसका ज्ञान लगभग दूसरी शताब्दी ई. के संस्कृत के एक पाषाण अभिलेख से होता है। इस अभिलेख को शक शासक रुद्रदमन की उपलब्धियों का उल्लेख करने के लिए बनवाया गया था।

इस अभिलेख में कहा गया है कि जलद्वारों और तटबंधों वाली इस झील का निर्माण मौर्य काल में एक स्थानीय राज्यपाल द्वारा किया गया था। लेकिन एक भीषण तूफान के कारण इसके तटबंध टूट गए और सारा पानी बह गया। बताया जाता है कि तत्कालीन शासक रुद्रदमन ने इस झील की मरम्मत अपने खर्चे से करवाई थी, और इसके लिए अपनी प्रजा से कर भी नहीं लिया था। इसी पाषाण-खंड पर एक और अभिलेख (लगभग पाँचवीं सदी) है जिसमें कहा गया है कि गुप्त वंश के एक शासक ने एक बार फिर इस झील की मरम्मत करवाई थी।

➲ शासकों ने सिंचाई के प्रबंध क्यों किए?

धान की रोपाई उन क्षेत्रों में की जाती है जहाँ पानी बहुतायत मात्रा में होता है। इसमें पहले धान के बीज अंकुरित करके पानी से भरे खेतों में पौधों की रोपाई की जाती है। चूँकि ज़्यादा मात्रा में पौध बच जाती है अत: इससे धान की उपज बढ़ जाती है।

5. बदलता हुआ देहात

5.1 जनता में राजा की छवि

राजाओं के बारे में प्रजा क्या सोचती थी? स्वाभाविक है कि अभिलेखों से सभी जवाब नहीं मिलते हैं। वस्तुत: साधारण जनता द्वारा राजाओं के बारे में अपने विचारों और अनुभव के विवरण कम ही छोड़े गए हैं। फिर भी इतिहासकारों ने इसका निराकरण करने का प्रयास किया है। उदाहरण के तौर पर, जातक और पंचतंत्र जैसे ग्रंथों में वर्णित कथाओं की समीक्षा करके इतिहासकारों ने पता लगाया है कि इनमें से अनेक कथाओं के स्रोत मौखिक किस्से-कहानियाँ हैं जिन्हें बाद में लिपिबद्ध किया गया होगा। जातक कथाएँ पहली सहस्राब्दि ई. के मध्य में पालि भाषा में लिखी गईं।

गंदतिन्दु जातक नामक एक कहानी में बताया गया है कि एक कुटिल राजा की प्रजा किस प्रकार से दुखी रहती है। इन लोगों में वृद्ध महिलाएँ, पुरुष, किसान, पशुपालक, ग्रामीण बालक और यहाँ तक कि जानवर भी शामिल हैं। जब राजा अपनी पहचान बदल कर प्रजा के बीच में यह पता लगाने गया कि लोग उसके बारे में क्या सोचते हैं तो एक-एक कर सबने अपने दुखों के लिए राजा को भला-बुरा कहा। उनकी शिकायत थी कि रात में डकैत उन पर हमला करते हैं तो दिन में कर इकट्ठा करने वाले अधिकारी। ऐसी परिस्थिति से बचने के लिए लोग अपने-अपने गाँव छोड़ कर जंगल में बस गए।

जैसा कि इस कथा से पता चलता है कि राजा और प्रजा, विशेषकर ग्रामीण प्रजा, के बीच संबंध तनावपूर्ण रहते थे, क्योंकि शासक अपने राजकोष को भरने के लिए बड़े-बड़े कर की माँग करते थे जिससे किसान खासतौर पर त्रस्त रहते थे। इस जातक कथा से पता चलता है कि इस संकट से बचने का एक उपाय जंगल की ओर भाग जाना होता था। इसी बीच करों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए किसानों ने उपज बढ़ाने के और उपाए ढूँढ़ने शुरू किए।

5.2 उपज बढ़ाने के तरीके

उपज बढ़ाने का एक तरीका हल का प्रचलन था। जो छठी शताब्दी ई. पू. से ही गंगा और कावेरी की घाटियों के उर्वर कछारी क्षेत्र में फैल गया था। जिन क्षेत्रों में भारी वर्षा होती थी वहाँ लोहे के फाल वाले हलों के माध्यम से उर्वर भूमि की जुताई की जाने लगी। इसके अलावा गंगा की घाटी में धान की रोपाई की वजह से उपज में भारी वृद्धि होने लगी। हालाँकि किसानों को इसके लिए कमरतोड़ मेहनत करनी पड़ती थी।

यद्यपि लोहे के फाल वाले हल की वजह से फसलों की उपज बढ़ने लगी लेकिन ऐसे हलों का उपयोग उपमहाद्वीप के कुछ ही हिस्से में

सीमित था। पंजाब और राजस्थान जैसी अर्धशुष्क ज़मीन वाले क्षेत्रों में लोहे के फाल वाले हल का प्रयोग बीसवीं सदी में शुरू हुआ। जो किसान उपमहाद्वीप के पूर्वोत्तर और मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में रहते थे उन्होंने खेती के लिए कुदाल का उपयोग किया, जो ऐसे इलाके के लिए कहीं अधिक उपयोगी था।

उपज बढ़ाने का एक और तरीका कुओं, तालाबों और कहीं-कहीं नहरों के माध्यम से सिंचाई करना था। व्यक्तिगत लोगों और कृषक समुदायों ने मिलकर सिंचाई के साधन निर्मित किए। व्यक्तिगत तौर पर तालाबों, कुओं और नहरों जैसे सिंचाई साधन निर्मित करने वाले लोग प्राय: राजा या प्रभावशाली लोग थे जिन्होंने अपने इन कामों का उल्लेख अभिलेखों में भी करवाया।

5.3 ग्रामीण समाज में विभिन्नताएँ

यद्यपि खेती की इन नयी तकनीकों से उपज तो बढ़ी लेकिन इसके लाभ समान नहीं थे। इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि खेती से जुड़े लोगों में उत्तरोत्तर भेद बढ़ता जा रहा था। कहानियों में विशेषकर बौद्ध कथाओं में भूमिहीन खेतिहर श्रमिकों, छोटे किसानों और बड़े-बड़े ज़मींदारों का उल्लेख मिलता है। पालि भाषा में *गहपति* का प्रयोग छोटे किसानों और ज़मींदारों के लिए किया जाता था। बड़े-बड़े ज़मींदार और ग्राम प्रधान शक्तिशाली माने जाते थे जो प्राय: किसानों पर नियंत्रण रखते थे। ग्राम प्रधान का पद प्राय: वंशानुगत होता था। आरंभिक तमिल संगम साहित्य में भी गाँवों में रहने वाले विभिन्न वर्गों के लोगों का उल्लेख है, जैसे कि *वेल्लालर* या बड़े ज़मींदार; हलवाहा या *उल्वर* और दास *अणिमई*। यह संभव है कि वर्गों की यह विभिन्नता भूमि के स्वामित्व, श्रम और नयी प्रौद्योगिकी के उपयोग पर आधारित हो। ऐसी परिस्थिति में भूमि का स्वामित्व महत्वपूर्ण हो गया जिसकी चर्चा प्राय: विधि ग्रंथों में की जाती थी।

गहपति

गहपति घर का मुखिया होता था और घर में रहने वाली महिलाओं, बच्चों, नौकरों और दासों पर नियंत्रण करता था। घर से जुड़े भूमि, जानवर या अन्य सभी वस्तुओं का वह मालिक होता था। कभी-कभी इस शब्द का प्रयोग नगरों में रहने वाले संभ्रांत व्यक्तियों और व्यापारियों के लिए भी होता था।

स्रोत 6

सीमाओं का महत्त्व

मनुस्मृति आरंभिक भारत का सबसे प्रसिद्ध विधिग्रंथ है। इसे संस्कृत भाषा में दूसरी शताब्दी ई.पू. और दूसरी शताब्दी ई. के बीच लिखा गया था। इस ग्रंथ में राजा को यह सलाह दी गई है :

> चूँकि सीमाओं की अनभिज्ञता के कारण विश्व में बार-बार विवाद पैदा होते हैं इसलिए उसे सीमाओं की पहचान के लिए गुप्त निशान ज़मीन में गाड़ कर रखने चाहिए जैसे कि पत्थर, हड्डियाँ, गाय के बाल, भूसी, राख, खपटे, गाय के सूखे गोबर, ईंट, कोयला, कंकड़ और रेत। उसे सीमाओं पर इसी प्रकार के और तत्व भूमि में छुपा कर गाड़ने चाहिए जो समय के साथ नष्ट न हों।

➲ क्या ये सीमा चिह्न विवाद के हल के लिए पर्याप्त रहे होंगे?

स्रोत 7

एक छोटे गाँव का जीवन

हर्षचरित संस्कृत में लिखी गई कन्नौज (मानचित्र 3 देखिए) के शासक हर्षवर्धन की जीवनी है, इसके लेखक बाणभट्ट (लगभग सातवीं शताब्दी ई.) हर्षवर्धन के राजकवि थे। यह उस ग्रंथ का एक अंश है। इसमें विंध्य क्षेत्र के जंगल के किनारे की एक बस्ती के जीवन का एक अतिविरल चित्रण किया गया है:

बस्ती के किनारे का अधिकांश क्षेत्र जंगल है और यहाँ धान की उपज वाली, खलिहान और उपजाऊ भूमि के हिस्सों को छोटे किसानों ने आपस में बाँट लिया है... यहाँ के अधिकांश लोग कुदाल का प्रयोग करते हैं... क्योंकि घास से भरी भूमि में हल चलाना मुश्किल है। बहुत कम हिस्से साफ़ हैं, जो हैं भी उसकी काली मिट्टी काले लोहे जैसी सख़्त है।

यहाँ लोग पेड़ की छाल के गट्ठर लेकर चलते हैं... फूलों से भरे अनगिनत बोरे... अलसी और सन, भारी मात्रा में शहद, मोरपंख, मोम, लकड़ी और घास के बोझ लेकर आते-जाते रहते हैं। ग्रामीण महिलाएँ रास्ते में बसे गाँवों में जाकर बेचने को तत्पर रहती हैं। उनके सिरों पर जंगल से एकत्र किए गए फलों की टोकरियाँ थीं।

➲ इस अंश में वर्णित लोगों को व्यवसाय के आधार पर आप कैसे वर्गीकृत करेंगे?

5.4 भूमिदान और नए संभ्रात ग्रामीण

ईसवी की आरंभिक शताब्दियों से ही भूमिदान के प्रमाण मिलते हैं। इनमें से कई का उल्लेख अभिलेखों में मिलता है। इनमें से कुछ अभिलेख पत्थरों पर लिखे गए थे लेकिन अधिकांश ताम्र पत्रों पर खुदे होते थे जिन्हें संभवत: उन लोगों को प्रमाण रूप में दिया जाता था जो भूमिदान लेते थे। भूमिदान के जो प्रमाण मिले हैं वे साधारण तौर पर धार्मिक संस्थाओं या ब्राह्मणों को दिए गए थे। अधिकांश अभिलेख संस्कृत में थे। विशेषकर सातवीं शताब्दी के बाद के अभिलेखों के कुछ अंश संस्कृत में हैं और कुछ तमिल और तेलुगु जैसी स्थानीय भाषाओं में हैं। आइए एक ऐसे अभिलेख पर ध्यान से विचार करें।

प्रभावती गुप्त आरंभिक भारत के एक सबसे महत्वपूर्ण शासक चंद्रगुप्त द्वितीय (लगभग 375-415 ई.) की पुत्री थी। उसका विवाह दक्कन पठार के वाकाटक परिवार में हुआ था जो एक महत्वपूर्ण शासक वंश था। संस्कृत धर्मशास्त्रों के अनुसार, महिलाओं को भूमि जैसी संपत्ति पर स्वतंत्र अधिकार नहीं था लेकिन एक अभिलेख से पता चलता है कि प्रभावती भूमि की स्वामी थी और उसने दान भी किया था। इसका एक कारण यह हो सकता है, क्योंकि वह एक रानी (आरंभिक भारतीय इतिहास की ज्ञात कुछ रानियों में से एक) थी और इसीलिए उनका यह उदाहरण एक विरला ही रहा हो। यह भी संभव है कि धर्मशास्त्रों को हर स्थान पर समान रूप से लागू नहीं किया जाता हो।

अभिलेख से हमें ग्रामीण प्रजा का भी पता चलता है। इनमें ब्राह्मण, किसान तथा अन्य प्रकार के वर्ग शामिल थे जो शासकों या उनके प्रतिनिधियों को कई प्रकार की वस्तुएँ प्रदान करते थे। अभिलेख के अनुसार इन लोगों को गाँव के नए प्रधान की आज्ञाओं का पालन करना पड़ता था और संभवत: अपने भुगतान उसे ही देने पड़ते थे।

इस प्रकार भूमिदान अभिलेख देश के कई हिस्सों में प्राप्त हुए हैं। क्षेत्रों में दान में दी गई भूमि की माप में अंतर है : कहीं-कहीं छोटे-छोटे टुकड़े, तो कहीं कहीं बड़े-बड़े क्षेत्र दान में दिए गए हैं। साथ ही भूमिदान में दान प्राप्त करने वाले लोगों के अधिकारों में भी क्षेत्रीय परिवर्तन मिलते हैं। इतिहासकारों में भूमिदान का प्रभाव एक गर्म वाद-विवाद का विषय बना हुआ है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि भूमिदान शासक वंश द्वारा कृषि को नए क्षेत्रों में प्रोत्साहित करने की एक रणनीति थी, जबकि कुछ का कहना है कि भूमिदान से दुर्बल होते राजनीतिक प्रभुत्व का संकेत मिलता है अर्थात् राजा का शासन सामंतों पर दुर्बल होने लगा तो उन्होंने भूमिदान के माध्यम से अपने समर्थक जुटाने प्रारंभ कर दिए। उनका यह भी मानना है कि राजा स्वयं को उत्कृष्ट स्तर के मानव के

रूप में प्रदर्शित करना चाहते थे (जैसा कि हमने पिछले अंश में देखा है)। उनका नियंत्रण ढीला होता जा रहा था इसलिए वे अपनी शक्ति का आडंबर प्रस्तुत करना चाहते थे।

स्रोत 8

प्रभावती गुप्त और दंगुन गाँव

प्रभावती गुप्त ने अपने अभिलेख में यह कहा है:

प्रभावती ग्राम कुटुंबिनों (गाँव के गृहस्थ और कृषक), ब्राह्मणों, और दंगुन गाँव के अन्य वासियों को आदेश देती है ...

"आपको ज्ञात हो कि कार्तिक शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि को धार्मिक पुण्य प्राप्ति के लिए इस ग्राम को जल अर्पण के साथ आचार्य चनालस्वामी को दान किया गया है। आपको इनके सभी आदेशों का पालन करना चाहिए।

एक *अग्रहार* के लिए उपयुक्त निम्नलिखित रियायतों का निर्देश भी देती हूँ। इस गाँव में पुलिस या सैनिक प्रवेश नहीं करेंगे। दौरे पर आने वाले शासकीय अधिकारियों को यह गाँव घास देने और आसन में प्रयुक्त होने वाली जानवरों की खाल और कोयला देने के दायित्व से मुक्त है। साथ ही वे मदिरा खरीदने और नमक हेतु खुदाई करने के राजसी अधिकार को कार्यान्वित किए जाने से मुक्त हैं। इस गाँव को खनिज-पदार्थ और *खदिर* वृक्ष के उत्पाद देने से भी छूट है। फूल और दूध देने से भी छूट है। इस गाँव का दान इसके भीतर की संपत्ति और बड़े-छोटे सभी करों सहित किया गया है।"

इस राज्यादेश को 13वें राज्य वर्ष में लिखा गया है और इसे चक्रदास ने उत्कीर्ण किया है।

➲ इस गाँव में कौन-कौन सी वस्तुएँ पैदा की जाती थीं?

अग्रहार उस भूभाग को कहते थे जो ब्राह्मणों को दान किया जाता था। ब्राह्मणों से भूमिकर या अन्य प्रकार के कर नहीं वसूले जाते थे। ब्राह्मणों को स्वयं स्थानीय लोगों से कर वसूलने का अधिकार था।

भूमिदान के प्रचलन से राज्य तथा किसानों के बीच संबंध की झाँकी मिलती है। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी थे जिन पर अधिकारियों या *सामंतों* का नियंत्रण नहीं था: जैसे कि पशुपालक, संग्राहक, शिकारी, मछुआरे, शिल्पकार (घुमक्कड़ तथा लगभग एक ही स्थान पर रहने वाले) और जगह-जगह घूम कर खेती करने वाले लोग। सामान्यत: ऐसे लोग अपने जीवन और आदान-प्रदान के विवरण नहीं रखते थे।

➲ चर्चा कीजिए...

यह पता कीजिए कि क्या आपके राज्य में हल से खेती, सिंचाई, तथा धान की रोपाई की जाती है? और अगर नहीं तो क्या कोई वैकल्पिक व्यवस्थाएँ हैं।

6. नगर एवं व्यापार

6.1 नए नगर

आइए उन नगरों की बात करें जिनका विकास लगभग छठी शताब्दी ई.पू. में

उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। जैसा कि हमने पढ़ा है, इनमें से अधिकांश नगर *महाजनपदों* की राजधानियाँ थे। प्रायः सभी नगर संचार मार्गों के किनारे बसे थे। पाटलिपुत्र जैसे कुछ नगर नदीमार्ग के किनारे बसे थे। उज्जयिनी जैसे अन्य नगर भूतल मार्गों के किनारे थे। इसके अलावा पुहार जैसे नगर समुद्रतट पर थे, जहाँ से समुद्री मार्ग प्रारंभ हुए। मथुरा जैसे अनेक शहर व्यावसायिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक गतिविधियों के जीवंत केंद्र थे।

पाटलिपुत्र का इतिहास

प्रत्येक नगर का अपना इतिहास था। उदाहरण के तौर पर, पाटलिपुत्र का विकास पाटलिग्राम नाम के एक गाँव से हुआ। फिर पाँचवीं सदी ई.पू. में मगध शासकों ने अपनी राजधानी राजगाह से हटाकर इसे बस्ती में लाने का निर्णय किया और इसका नाम बदल दिया। चौथी शताब्दी ई.पू. तक आते-आते यह मौर्य साम्राज्य की राजधानी और एशिया के सबसे बड़े नगरों में से एक बन गया। बाद में इसका महत्त्व कम हो गया और जब चीनी यात्री श्वैन त्सांग सातवीं सदी ई. में यहाँ आया तो इसे यह नगर खंडहर में बदला मिला और उस समय यहाँ की जनसंख्या भी कम थी।

6.2 नगरीय जनसंख्या :

संभ्रांत वर्ग और शिल्पकार

हमने पढ़ा है कि शासक वर्ग और राजा किलेबंद नगरों में रहते थे। यद्यपि इनमें से अधिकांश स्थलों पर व्यापक रूप से खुदाई करना संभव नहीं है, क्योंकि आज भी इन क्षेत्रों में लोग रहते हैं (हड़प्पा शहरों से भिन्न)। लेकिन फिर भी यहाँ से विभिन्न प्रकार के पुरावशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें उत्कृष्ट श्रेणी के मिट्टी के कटोरे और थालियाँ मिली हैं जिन पर चमकदार कलई चढ़ी है। इन्हें उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र कहा जाता है। संभवतः इनका उपयोग अमीर लोग किया करते होंगे। साथ ही सोने चाँदी, कांस्य, ताँबे, हाथी दाँत, शीशे जैसे तरह-तरह के पदार्थों के बने गहने, उपकरण, हथियार, बर्तन, सीप और पक्की मिट्टी मिली हैं।

द्वितीय शताब्दी ई.पू. आते-आते हमें कई नगरों में छोटे दानात्मक अभिलेख प्राप्त होते हैं। इनमें दाता के नाम के साथ-साथ प्रायः उसके व्यवसाय का भी उल्लेख होता है। इनमें नगरों में रहने वाले धोबी,

चित्र 2.6
एक प्रतिमा की भेंट
यह मथुरा से मिली एक मूर्ति का भाग है। इस पर प्राकृत में अभिलेख है जिसमें कहा गया है कि एक स्वर्णकार धर्मक की पत्नी नागपिया ने इसे एक धार्मिक स्थल में स्थापित किया था।

➲ तीसरी सहस्राब्दि ई.पू. में हड़प्पा सभ्यता जिस क्षेत्र में फैली क्या वहाँ कोई नगर थे?

बुनकर, लिपिक, बढ़ाई, कुम्हार, स्वर्णकार, लौहकार, अधिकारी, धार्मिक गुरु, व्यापारी और राजाओं के बारे में विवरण लिखे होते हैं।

कभी-कभी उत्पादकों और व्यापारियों के संघ का भी उल्लेख मिलता है जिन्हें *श्रेणी* कहा गया है। ये श्रेणियाँ संभवत: पहले कच्चे माल को खरीदती थीं; फिर उनसे सामान तैयार कर बाज़ार में बेच देती थीं। यह संभव है कि शिल्पकारों ने नगर में रहने वाले संभ्रांत लोगों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए कई प्रकार के लौह उपकरणों का प्रयोग किया हो।

6.3 उपमहाद्वीप और उसके बाहर का व्यापार

छठी शताब्दी ई.पू. से ही उपमहाद्वीप में नदी मार्गों और भूमार्गों का मानो जाल बिछ गया था और कई दिशाओं में फैल गया था। मध्य एशिया और उससे भी आगे तक भू-मार्ग थे। समुद्रतट पर बने कई बंदरगाहों से

दानात्मक अभिलेखों में धार्मिक संस्थाओं को दिए दान का विवरण होता है।

स्रोत 9

मालाबार तट (आधुनिक केरल)

यह एक यूनानी समुद्र यात्री द्वारा रचित *पेरिप्लस ऑफ़ एरीथ्रियन सी* का एक अंश (लगभग प्रथम शताब्दी ई.) है।

भारी मात्रा में काली मिर्च और दाल चीनी खरीदने के लिए बाज़ार वाले नगरों में वे (विदेशी व्यापारी) जहाज़ भेजते हैं। एक तो यहाँ भारी मात्रा में सिक्कों, पुखराज, सुरमा, मूँगे, कच्चे शीशे, ताँबे, टिन और सीसे का आयात किया जाता है... इन बाज़ारों के आसपास भारी मात्रा में उत्पन्न काली मिर्च का निर्यात किया जाता है... इसके अलावा, उच्च कोटि के मोतियों, हाथी दाँत, रेशमी वस्त्र विभिन्न प्रकार के पारदर्शी पत्थरों, हीरों और काले नग और कछुए की खोपड़ी का भारी मात्रा में आयात होता है।

तमिलनाडु के कोडुमनाल में बहुमूल्य और कम मूल्यवान पत्थरों से बनाए जाने वाले मूँगों के उद्योग के पुरातात्विक साक्ष्य मिले हैं। यह संभव है कि *पेरिप्लस* में वर्णित पत्थरों को इन्हीं तटवर्ती बंदरगाहों तक स्थानीय व्यापारी लाए होंगे।

➲ लेखक ने यह सूची क्यों तैयार की थी?

पेरिप्लस यूनानी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ समुद्री यात्रा है और *एरीथ्रियन* यूनानी भाषा में लाल सागर को कहते हैं।

जलमार्ग अरब सागर से होते हुए, उत्तरी अफ़्रीका, पश्चिम एशिया तक फैल गया; और बंगाल की खाड़ी से यह मार्ग चीन और दक्षिणपूर्व एशिया तक फैल गया था। शासकों ने प्रायः इन मार्गों पर नियंत्रण करने की कोशिश की और संभवतः वे इन मार्गों पर व्यापारियों की सुरक्षा के बदले उनसे धन लेते थे।

इन मार्गों पर चलने वाले व्यापारियों में पैदल फेरी लगाने वाले व्यापारी तथा बैलगाड़ी और घोड़े-खच्चरों जैसे जानवरों के दल के साथ चलने वाले व्यापारी होते थे। साथ ही समुद्री मार्ग से भी लोग यात्रा करते थे जो खतरनाक तो थी, लेकिन बहुत लाभदायक भी होती थी। तमिल भाषा में *मसत्थुवन* और प्राकृत में *सत्थवाह* और *सेट्ठी* के नाम से प्रसिद्ध सफल व्यापारी बड़े धनी हो जाते थे। नमक, अनाज, कपड़ा, धातु और उससे निर्मित उत्पाद, पत्थर, लकड़ी, जड़ी-बूटी जैसे अनेक प्रकार के सामान एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाए जाते थे। रोमन साम्राज्य में काली मिर्च, जैसे मसालों तथा कपड़ों व जड़ी-बूटियों की भारी माँग थी। इन सभी वस्तुओं को अरब सागर के रास्ते भूमध्य क्षेत्र तक पहुँचाया जाता था।

6.4 सिक्के और राजा

व्यापार के लिए सिक्के के प्रचलन से विनिमय कुछ हद तक आसान हो गया था। चाँदी और ताँबे के आहत सिक्के (छठी शताब्दी ई.पू.) सबसे पहले ढाले गए और प्रयोग में आए। पूरे उपमहाद्वीप में खुदाई के दौरान इस प्रकार के सिक्के मिले हैं। मुद्राशास्त्रियों ने इनका और अन्य सिक्कों का अध्ययन करके उनके वाणिज्यिक प्रयोग के संभावित क्षेत्रों का पता लगाया है।

आहत सिक्के पर बने प्रतीकों को उन विशेष मौर्य वंश जैसे राजवंशों के प्रतीकों से मिलाकर पहचान करने की कोशिश की गई तो पता चला कि इन सिक्कों को राजाओं ने जारी किया था। यह भी संभव है कि व्यापारियों, धनपतियों और नागरिकों ने इस प्रकार के कुछ सिक्के जारी किए हों। शासकों की प्रतिमा और नाम के साथ सबसे पहले सिक्के हिंद-यूनानी शासकों ने जारी किए थे जिन्होंने द्वितीय शताब्दी ई.पू. में उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र पर नियंत्रण स्थापित किया था।

हालाँकि सोने के सिक्के बड़े पैमाने पर प्रथम शताब्दी ईसवी में कुषाण राजाओं ने जारी किए थे। इनके आकार और वज़न तत्कालीन रोमन सम्राटों तथा ईरान के पार्थियन शासकों द्वारा जारी सिक्कों के बिलकुल समान थे। उत्तर और मध्य भारत के कई पुरास्थलों पर ऐसे सिक्के मिले हैं। सोने के सिक्कों के व्यापक प्रयोग से संकेत मिलता है कि बहुमूल्य वस्तुओं और भारी मात्रा में वस्तुओं का विनिमय किया जाता था। इसके अलावा, दक्षिण भारत के अनेक पुरास्थलों से बड़ी संख्या में रोमन सिक्के मिले हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि व्यापारिक तंत्र राजनीतिक सीमाओं से बँधा

नहीं था; क्योंकि दक्षिण भारत रोमन साम्राज्य के अंतर्गत न होते हुए भी व्यापारिक दृष्टि से रोमन साम्राज्य से संबंधित था।

पंजाब और हरियाणा जैसे क्षेत्रों के यौधेय (प्रथम शताब्दी ई.) कबायली गणराज्यों ने भी सिक्के जारी किए थे। पुराविदों को यौधेय शासकों द्वारा जारी ताँबे के सिक्के हज़ारों की संख्या में मिले हैं जिनसे यौधेयों की व्यापार में रुचि और सहभागिता परिलक्षित होती है।

सोने के सबसे भव्य सिक्कों में से कुछ गुप्त शासकों ने जारी किए। इनके आरंभिक सिक्कों में प्रयुक्त सोना अति उत्तम था। इन सिक्कों के माध्यम से दूर देशों से व्यापार-विनिमय करने में आसानी होती थी जिससे शासकों को भी लाभ होता था।

छठी शताब्दी ई. से सोने के सिक्के मिलने कम हो गए। क्या इससे यह संकेत मिलता है कि उस काल में कुछ आर्थिक संकट पैदा हो गया था? इतिहासकारों में इसे लेकर मतभेद है। कुछ का कहना है कि रोमन साम्राज्य के पतन के बाद दूरवर्ती व्यापार में कमी आई जिससे उन राज्यों, समुदायों और क्षेत्रों की संपन्नता पर असर पड़ा जिन्हें दूरवर्ती व्यापार से लाभ मिलता था। अन्य का कहना है, कि इस काल में नए नगरों और व्यापार के नवीन तंत्रों का उदय होने लगा था। उनका यह भी कहना है कि यद्यपि इस काल के सोने के सिक्कों का मिलना तो कम हो गया लेकिन अभिलेखों और ग्रंथों में सिक्के का उल्लेख होता रहा है। क्या इसका अर्थ यह हो सकता है कि सिक्के इसलिए कम मिलते हैं क्योंकि वे प्रचलन में थे और उनका किसी ने संग्रह करके नहीं रखा था।

मुद्राशास्त्र सिक्कों का अध्ययन है। इसके साथ ही उन पर पाए जाने वाले चित्र, लिपि आदि तथा उनकी धातुओं का विश्लेषण और जिन संदर्भों में इन सिक्के को पाया गया है, उनका अध्ययन भी मुद्राशास्त्र के अंतर्गत आता है।

चित्र 2.7
आहत शब्द से ही स्पष्ट है कि इन सिक्कों पर प्रतीकों को आहत कर उन्हें बनाया जाता था

चित्र 2.8
एक यौधेय सिक्का

7. मूल बातें

अभिलेखों का अर्थ कैसे निकाला जाता है?

अभी तक हम अन्य बातों के अलावा अभिलेखों के अंशों के बारे में अध्ययन कर रहे थे। लेकिन इतिहासकारों को यह कैसे ज्ञात होता है कि अभिलेखों पर क्या लिखा है?

चित्र 2.9
एक गुप्त सिक्का

➲ चर्चा कीजिए...

व्यापार में विनिमय के लिए क्या-क्या प्रयोग होता था? उल्लिखित स्रोतों से किस प्रकार के विनिमय का पता चलता है। क्या कुछ विनिमय ऐसे भी हैं जिनका ज्ञान स्रोतों से नहीं हो पाता है?
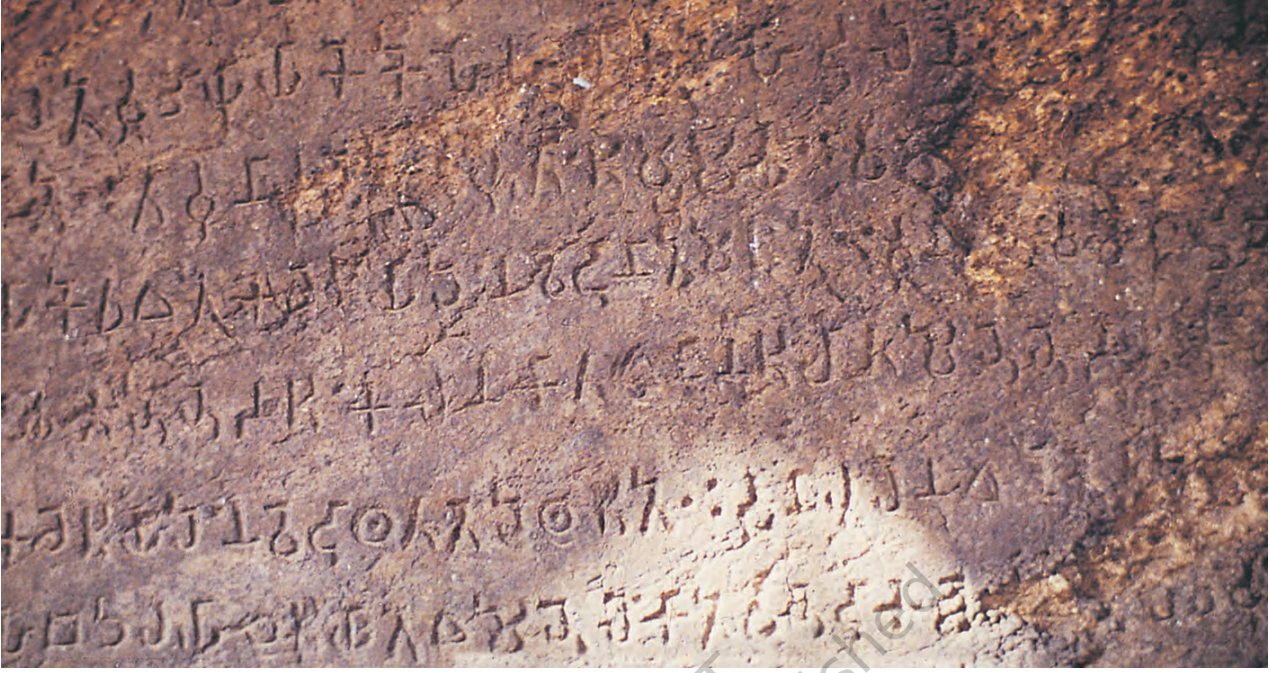
चित्र 2.10
असोक का एक अभिलेख

चित्र 2.11
असोक के समय की ब्राह्मी व उसके समानार्थी देवनागरी अक्षर

➲ क्या कुछ देवनागरी अक्षर ब्राह्मी से मिलते-जुलते हैं? क्या कुछ भिन्न भी हैं?

7.1 ब्राह्मी लिपि का अध्ययन

आधुनिक भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त लगभग सभी लिपियों का मूल ब्राह्मी लिपि है। ब्राह्मी लिपि का प्रयोग असोक के अभिलेखों में किया गया है। अट्ठारहवीं सदी से यूरोपीय विद्वानों ने भारतीय पंडितों की सहायता से आधुनिक बंगाली और देवनागरी लिपि में कई पांडुलिपियों का अध्ययन शुरू किया और उनके अक्षरों की प्राचीन अक्षरों के नमूनों से तुलना शुरू की।

आरंभिक अभिलेखों का अध्ययन करने वाले विद्वानों ने कई बार यह अनुमान लगाया कि ये संस्कृत में लिखे हैं जबकि प्राचीनतम अभिलेख वस्तुतः प्राकृत में थे। फिर कई दशकों बाद अभिलेख वैज्ञानिकों के अथक परिश्रम के बाद जेम्स प्रिंसेप ने असोककालीन ब्राह्मी लिपि का 1838 ई. में अर्थ निकाल लिया।

7.2 खरोष्ठी लिपि को कैसे पढ़ा गया?

पश्चिमोत्तर के अभिलेखों में प्रयुक्त खरोष्ठी लिपि के पढ़े जाने की कहानी अलग है। इस क्षेत्र में शासन करने वाले हिंद-यूनानी राजाओं (लगभग द्वितीय-प्रथम शताब्दी ई.पू.) द्वारा बनवाए गए सिक्कों से जानकारी हासिल करने में आसानी हुई है। इन सिक्कों में राजाओं के नाम यूनानी और खरोष्ठी में लिखे गए हैं। यूनानी भाषा पढ़ने वाले यूरोपीय विद्वानों ने अक्षरों का मेल किया। उदाहरण के तौर पर, दोनों लिपियों में अपोलोडोटस का नाम लिखने में एक ही प्रतीक, मान लीजिए 'अ' प्रयुक्त किया गया। चूँकि प्रिंसेप ने खरोष्ठी में लिखे अभिलेखों की भाषा

की पहचान प्राकृत के रूप में की थी इसलिए लंबे अभिलेखों को पढ़ना सरल हो गया।

7.3 अभिलेखों से प्राप्त ऐतिहासिक साक्ष्य

इतिहासकारों एवं अभिलेखशास्त्रियों के काम करने के तरीकों का पता लगाने के लिए आइए असोक के दो अभिलेखों को ध्यान से पढ़ें।

ध्यान देने योग्य बात है कि अभिलेख (स्रोत 10) में शासक असोक का नाम नहीं लिखा है। उसमें असोक द्वारा अपनाई गई उपाधियों का प्रयोग किया गया है; जैसे कि *देवानांपिय* अर्थात् देवताओं का प्रिय और '*पियदस्सी*' यानी 'देखने में सुन्दर'। असोक नाम अन्य अभिलेखों में मिलता है जिसमें उनकी उपाधियाँ भी लिखी हैं। इन अभिलेखों का परीक्षण करने के बाद अभिलेखशास्त्रियों ने पता लगाया कि उनके विषय, शैली, भाषा और पुरालिपिविज्ञान सबमें समानता है, अतः वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन अभिलेखों को एक ही शासक ने बनवाया था।

आपने यह भी देखा होगा कि असोक ने अपने अभिलेखों में कहा है कि उनसे पहले के शासकों ने रिपोर्ट एकत्र करने की व्यवस्था नहीं की थी। यदि असोक से पहले के उपमहाद्वीपीय इतिहास पर विचार करें तो क्या आपको लगता है कि असोक का यह वक्तव्य सही है? इतिहासकारों को बार-बार अभिलेखों में लिखे कथनों का परीक्षण करना पड़ता है ताकि यह पता चल सके जो उनमें लिखा है, वह सत्य है, संभव है या फिर अतिशयोक्तिपूर्ण है।

क्या आपने ध्यान दिया कि कुछ शब्द ब्रैकेट में लिखे हैं? अभिलेख शास्त्री प्रायः वाक्यों के अर्थ स्पष्ट करने के लिए ऐसा करते हैं। यह बड़े ध्यान से करना पड़ता है जिससे कि लेखक का मूल अर्थ बदल न जाए।

इतिहासकारों को और भी परीक्षण करने पड़ते हैं। यदि राजा के आदेश यातायात मार्गों के किनारे और नगरों के पास प्राकृतिक पत्थरों पर उत्कीर्ण थे, तो क्या वहाँ से आने-जाने वाले लोग उन्हें पढ़ने के लिए उस स्थान पर रुकते थे? अधिकांश लोग प्रायः पढ़े-लिखे नहीं थे। क्या

स्रोत 10

राजा के आदेश

राजन् देवानांपिय पियदस्सी यह कहते हैं:

अतीत में मसलों को निपटाने और नियमित रूप से सूचना एकत्र करने की व्यवस्थएँ नहीं थीं। लेकिन मैंने निम्नलिखित (व्यवस्था) की हैं। लोगों के समाचार हम तक *पतिवेदक* सदैव पहुँचाएँ। चाहे मैं कहीं भी हूँ, खाना खा रहा हूँ, अन्तःपुर में हूँ विश्राम कक्ष में हूँ, गोशाले में हूँ, या फिर पालकी में मुझे ले जाया जा रहा हो अथवा वाटिका में हूँ। मैं लोगों के विषयों का निराकरण हर स्थल पर करूँगा।

➲ अभिलेखशास्त्रियों ने *पतिवेदक* शब्द का अर्थ संवाददाता बताया है। आधुनिक संवाददाता की तुलना में *पतिवेदक* के दायित्व कितने भिन्न रहे होंगे?

चित्र 2.12
हिंद-यूनानी शासक मेनाण्डर का एक सिक्का

स्रोत 11

राजा की वेदना

जब देवानांपिय पियदस्सी ने अपने शासन के आठ वर्ष पूरे किए तो उन्होंने कलिंग (आधुनिक तटवर्ती उड़ीसा) पर विजय प्राप्त की।

डेढ़ लाख पुरुषों को निष्कासित किया गया; एक लाख मारे गए और इससे भी ज़्यादा की मृत्यु हुई।

कलिंग पर शासन स्थापित करने के बाद देवानांपिय धम्म के गहन अध्ययन, धम्म के स्नेह और धम्म के उपदेश में डूब गए हैं।

यही देवानांपिय के लिए कलिंग की विजय का पश्चाताप है।

देवानांपिय के लिए यह बहुत वेदनादायी और निंदनीय है कि जब कोई किसी राज्य पर विजय प्राप्त करता है तो पराजित राज्य का हनन होता है, वहाँ लोग मारे जाते हैं, निष्कासित किए जाते हैं।

➲ चर्चा कीजिए...

मानचित्र 2 देखिए और असोक के अभिलेख के प्राप्ति स्थान की चर्चा कीजिए। क्या उनमें कोई एक-सा प्रारूप दिखता है?

पाटलिपुत्र में प्रयुक्त प्राकृत उपमहाद्वीप में सभी स्थानों पर लोग समझते थे? क्या राजा के आदेशों का पालन किया जाता था? इन प्रश्नों के उत्तर पाना सदैव आसान नहीं हैं।

इनमें से कुछ समस्याओं के प्रमाण हमें असोक के अभिलेख में मिलते हैं (स्रोत 11) जिसकी व्याख्या प्राय: असोक की वेदना के प्रतिबिंब के रूप में की जाती है। साथ ही यह युद्ध के प्रति उनकी मनोवृत्ति में परिवर्तन को भी दर्शाता है। जैसा कि हम आगे पढ़ेंगे, यदि हम अभिलेख के शाब्दिक अर्थ के परे समझने का प्रयास करते हैं तो परिस्थिति और भी जटिल हो जाती है।

यद्यपि असोक के अभिलेख आधुनिक उड़ीसा से प्राप्त हुए हैं लेकिन उनकी वेदना को परिलक्षित करने वाला अभिलेख वहाँ नहीं मिला है अर्थात् यह अभिलेख उस क्षेत्र में नहीं उपलब्ध है जिस पर विजय प्राप्त की गई थी। इसका हम क्या अर्थ लगाएँ? क्या राजा की नव विजय की वेदना उस क्षेत्र के लिए इतनी दर्दनाक थी कि राजा इस मुद्दे पर कुछ कह न सका।

8. अभिलेख साक्ष्य की सीमा

अब आपको यह पता चल गया होगा कि अभिलेखों से प्राप्त जानकारी की भी सीमा होती है। कभी-कभी इसकी तकनीकी सीमा होती है: अक्षरों को हलके ढंग से उत्कीर्ण किया जाता है जिन्हें पढ़ पाना मुश्किल होता है। साथ ही, अभिलेख नष्ट भी हो सकते हैं जिनसे अक्षर लुप्त हो जाते हैं। इसके अलावा अभिलेखों के शब्दों के वास्तविक अर्थ के बारे में पूर्ण रूप से ज्ञान हो पाना सदैव सरल नहीं होता क्योंकि कुछ अर्थ किसी विशेष स्थान या समय से संबंधित होते हैं। यदि आप अभिलेख के शोधपत्रों को पढ़ें (इसमें से कुछ का उल्लेख काल रेखा 2 में किया गया है) तो आप पाएँगे कि विद्वान इनके पढ़ने की वैकल्पिक विधियों पर चर्चा करते रहते हैं।

यद्यपि कई हज़ार अभिलेख प्राप्त हुए हैं लेकिन सभी के अर्थ नहीं निकाले जा सके हैं या प्रकाशित किए गए हैं या उनके अनुवाद किए गए हैं। इनके अतिरिक्त और अनेक अभिलेख रहे होंगे जो कालांतर में सुरक्षित नहीं बचे हैं। इसलिए जो अभिलेख अभी उपलब्ध हैं, वह संभवत: कुल अभिलेखों के अंश मात्र हैं।

इसके अतिरिक्त एक और मौलिक समस्या है। यह ज़रूरी नहीं है कि जिसे हम आज राजनीतिक और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण मानते हैं उन्हें अभिलेखों में अंकित किया ही गया हो। उदाहरण के तौर पर, खेती की दैनिक प्रक्रियाएँ और रोज़मर्रा की ज़िंदगी के सुख-दुख का उल्लेख अभिलेखों में नहीं मिलता है क्योंकि प्राय: अभिलेख बड़े और विशेष

अवसरों का वर्णन करते हैं। इसके अलावा अभिलेख हमेशा उन्हीं व्यक्तियों के विचार व्यक्त करते हैं जो उन्हें बनवाते थे। इसलिए इन अभिलेखों में व्यक्त विचारों की समीक्षा अन्य विचारों के परिप्रेक्ष्य में करनी होगी ताकि अपने अतीत का बेहतर ज्ञान हो सके।

अर्थात् राजनीतिक और आर्थिक इतिहास का पूर्ण ज्ञान मात्र अभिलेख शास्त्र से ही नहीं मिलता है। साथ ही इतिहासकार प्राय: प्राचीन और अर्वाचीन दोनों प्रकार के प्रमाणों पर आशंका व्यक्त करते हैं। उन्नीसवीं सदी के आखिरी दशकों में और बीसवीं सदी के प्रारंभ में इतिहासकार प्रमुख रूप से राजाओं के इतिहास में रुचि रखते थे। बीसवीं सदी के मध्य से आर्थिक परिवर्तन, विभिन्न सामाजिक समुदायों के उदय के विषय में महत्वपूर्ण बन गए। हाल के दशकों में ऐसे समुदायों के प्रति इतिहासकारों की रुचि बढ़ी है जो सामाजिक हाशिए पर रहे हैं। इससे संभवत: प्राचीन स्रोतों पर पुनर्विचार किया जाएगा और विश्लेषण की नयी विधियाँ विकसित होंगी।

चित्र 2.13
कर्नाटक से प्राप्त एक ताम्रपत्र लेख; लगभग छठी शताब्दी ई.

काल रेखा 1
प्रमुख राजनीतिक और आर्थिक विकास

लगभग 600-500 ई.पू.	धान की रोपाई; गंगा घाटी में नगरीकरण; महाजनपद; आहत सिक्के
लगभग 500-400 ई.पू.	मगध के शासकों की सत्ता पर पकड़
लगभग 327-325 ई.पू.	सिकंदर का आक्रमण
लगभग 321 ई.पू.	चंद्रगुप्त मौर्य का राज्यारोहण
लगभग 272/268-231 ई.पू.	असोक का शासन
लगभग 185 ई.पू.	मौर्य साम्राज्य का अंत
लगभग 200-100 ई.पू.	पश्चिमोत्तर में शक शासन; दक्षिण भारत में चोल, चेर व पांड्य; दक्कन में सातवाहन
लगभग 100 ई.पू.-200 ई. तक	पश्चिमोत्तर के शक (मध्य एशिया के लोग) शासक; रोमन व्यापार; सोने के सिक्के
लगभग 78 ई.	कनिष्क का राज्यारोहण
लगभग 100-200 ई.	सातवाहन और शक शासकों द्वारा भूमिदान के अभिलेखीय प्रमाण
लगभग 320 ई.	गुप्त शासन का आरंभ
लगभग 335-375 ई.	समुद्रगुप्त
लगभग 375-415 ई.	चंद्रगुप्त द्वितीय; दक्कन में वाकाटक
लगभग 500-600 ई.	कर्नाटक में चालुक्यों का उदय और तमिलनाडु में पल्लवों का उदय
लगभग 606-647 ई.	कन्नौज के राजा हर्षवर्धन; चीनी यात्री श्वैन त्सांग की यात्रा
लगभग 712	अरबों की सिंध पर विजय

(नोट: आर्थिक विकास का शुद्ध कालनिर्धारण आसान नहीं है। साथ ही उपमहाद्वीप में अनेक भिन्नताएँ हैं जिन्हें काल रेखा में इंगित नहीं किया गया है। विशेष विकास के विशिष्ट काल का उल्लेख किया गया है। कनिष्क के राज्यारोहण की तिथि निश्चित नहीं है अत: राज्यारोहण की तिथि के साथ प्रश्नवाचक चिह्न लगाया गया है।)

काल रेखा 2
अभिलेखशास्त्र के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति

अट्ठारहवीं शताब्दी	
1784	बंगाल एशियाटिक सोसाइटी का गठन
उन्नीसवीं शताब्दी	
1810 का दशक	कोलिन मैकेंज़ी ने संस्कृत और तमिल भाषा के 8,000 अभिलेख एकत्र किए
1838	जेम्स प्रिंसेप द्वारा असोक के ब्राह्मी अभिलेखों का अर्थ लगाना
1877	अलेक्ज़ैंडर कनिंघम ने असोक के अभिलेखों के एक अंश को प्रकाशित किया
1886	दक्षिण भारत के अभिलेखों के शोधपत्र *एपिग्राफ़िआ कर्नाटिका* का प्रथम अंक
1888	*एपिग्राफ़िआ इंडिका* का प्रथम अंक
बीसवीं शताब्दी	
1965-66	डी.सी. सरकार ने *इंडियन एपिग्राफ़ी* एंड *इंडियन एपिग्राफ़िकल ग्लोसरी* प्रकाशित की

उत्तर दीजिए (लगभग 100 से 150 शब्दों में)

1. आरंभिक ऐतिहासिक नगरों में शिल्पकला के उत्पादन के प्रमाणों की चर्चा कीजिए। हड़प्पा के नगरों के प्रमाण से ये प्रमाण कितने भिन्न हैं?
2. महाजनपदों के विशिष्ट अभिलक्षणों का वर्णन कीजिए।
3. सामान्य लोगों के जीवन का पुनर्निर्माण इतिहासकार कैसे करते हैं?
4. पांड्य सरदार (स्रोत 3) को दी जाने वाली वस्तुओं की तुलना दंगुन गाँव (स्रोत 8) की वस्तुओं से कीजिए। आपको क्या समानताएँ और असमानताएँ दिखाई देती हैं?
5. अभिलेखशास्त्रियों की कुछ समस्याओं की सूची बनाइए।

निम्नलिखित पर एक लघु निबंध लिखिए (लगभग 500 शब्दों में)

6. मौर्य प्रशासन के प्रमुख अभिलक्षणों की चर्चा कीजिए। असोक के अभिलेखों में इनमें से कौन-कौन से तत्वों के प्रमाण मिलते हैं?

7. यह बीसवीं शताब्दी के एक सुविख्यात अभिलेखशास्त्री, डी.सी. सरकार का वक्तव्य है: भारतीयों के जीवन, संस्कृति, और गतिविधियों का ऐसा कोई पक्ष नहीं है जिसका प्रतिबिंब अभिलेखों में नहीं है: चर्चा कीजिए।

8. उत्तर-मौर्य काल में विकसित राजत्व के विचारों की चर्चा कीजिए।

9. वर्णित काल में कृषि के तौर-तरीकों में किस हद तक परिवर्तन हुए?

मानचित्र कार्य

10. मानचित्र 1 और 2 की तुलना कीजिए और उन महाजनपदों की सूची बनाइए जो मौर्य साम्राज्य में शामिल रहे होंगे। क्या इस क्षेत्र में असोक के कोई अभिलेख मिले हैं?

परियोजना कार्य (कोई एक)

11. एक महीने के अखबार एकत्रित कीजिए। सरकारी अधिकारियों द्वारा सार्वजनिक कार्यों के बारे में दिए गए वक्तव्यों को काटकर एकत्रित कीजिए। समीक्षा कीजिए कि इन परियोजनाओं के लिए आवश्यक संसाधनों के बारे में खबरों में क्या लिखा है। संसाधनों को किस प्रकार से एकत्र किया जाता है और परियोजनाओं का उद्देश्य क्या है। इन वक्तव्यों को कौन जारी करता है और उन्हें क्यों और कैसे प्रसारित किया जाता है? इस अध्याय में चर्चित अभिलेखों के साक्ष्यों से इनकी तुलना कीजिए। आप इनमें क्या समानताएँ और असमानताएँ पाते हैं?

12. आज प्रचलित पाँच विभिन्न नोटों और सिक्कों को इकट्ठा कीजिए। इनके दोनों ओर आप जो देखते हैं उनका वर्णन कीजिए। इन पर बने चित्रों, लिपियों और भाषाओं, माप, आकार या अन्य समानताओं और असमानताओं के बारे में एक रिपोर्ट तैयार कीजिए। इस अध्याय में दर्शित सिक्कों में प्रयुक्त सामग्रियों, तकनीकों, प्रतीकों, उनके महत्त्व और सिक्कों के संभावित कार्य की चर्चा करते हुए इनकी तुलना कीजिए।

यदि आप और जानकारी चाहते हैं तो इन्हें पढ़िए :

डी.एन. झा, 2004
अर्ली इंडिया: ए कॉनसाइज़ हिस्ट्री,
मनोहर, नयी दिल्ली।

आर.सालोमन, 1998
इंडियन एपिग्राफ़ी, मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली।

आर.एस. शर्मा, 1983
मैटीरियल कल्चर एंड सोशल फॉर्मेशन इन अर्ली इंडिया,
मैकमिलन, नयी दिल्ली।

डी.सी. सरकार, 1975
इंस्क्रिप्शंस ऑफ़ असोक,
पब्लिकेशन डिवीजन, मिनिस्ट्री ऑफ़ इंफ़ार्मेशन एंड ब्राडकॉस्टिंग, गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली।

रोमिला थापर, 1997
असोक एंड द डेक्लाइन ऑफ़ दि मौर्याज़,
ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,
नयी दिल्ली।

अधिक जानकारी के लिए आप निम्नलिखित वेबसाइट देख सकते हैं
http:/projectsouthasia.sdstate.edu/Docs/index.html